आई०ए० रिचर्ड्स का मूल्य सिद्धान्त

आधुनिक पाश्चात्य आलोचना में आई०ए० रिचर्ड्स का महत्त्वपूर्ण स्थान है। वे मूलतः मनोवैज्ञानिक तथा मूल्यवादी समीक्षक हैं अतः उनका साहित्यिक विवेचन मनोविज्ञान के धरातल पर है। इसी दृष्टि से उन्होंने ब्रैडले के 'कला कला के लिए' सिद्धान्त का खण्डन करते हुए मूल्य सिद्धान्त की स्थापना की है। रिचर्ड्स का मत है कि आज जब प्राचीन परम्पराएँ टूट रही हैं और मूल्य विघटित हो रहे हैं, तब सभ्य समाज, कला और कविता के सहारे ही अपनी मानसिक व्यवस्था और संतुलन बनाये रख सकता है। रिचर्ड्स के विचार से साहित्य समीक्षा का सिद्धान्त दो स्तम्भों पर टिका होना चाहिए— एक मूल्य और दूसरा सम्प्रेषण।

रिचर्ड्स कहता है कि समाज में मूल्यों की स्थापना अधिकांश व्यक्तियों को बिना किसी पारस्परिक विरोध के उनकी प्रमुख प्रेरणाओं को संतुष्ट करने के लिए होती है। इसके लिए जो नियम बनते हैं, उन्हें नैतिक नियम कहते हैं। वस्तुतः नैतिक या अच्छा या मूल्यवान का अर्थ है जो सर्वाधिक प्रेरणास्पद हो। इस सम्बन्ध में रिचर्ड्स कहता है कि कोई भी वस्तु जो किसी एक इच्छा को इस प्रकार शांत करती है कि उससे उसके समान या अधिक महत्त्वपूर्ण इच्छा का अवरोध नहीं होता— मूल्यवान है। अथवा दूसरे शब्दों में किसी इच्छा को यदि तुष्ट नहीं करने दिया जाता तो उसका केवल यही आधार हो सकता है कि वैसा करने से उससे भी अधिक महत्वपूर्ण इच्छाएँ कुंठित हो जायेंगी। इसी प्रकार व्यक्ति या जाति के द्वारा अनुमोदित (इच्छा पूर्ति) की प्राथमिकता पर आधारित सामान्य योजना की ही अभिव्यक्ति नैतिकता या नियमों के रूप में होती है। (प्रिंसिपल्स ऑफ लिटरेरी क्रिटिसिज्म, पृ० 38)

रिचर्ड्स की दृष्टि में कलाकार का काम उन अनुभूतियों को अंकित कर चिरस्थायी बना देना होता है जिन्हें वह सबसे अधिक मूल्यवान समझता है और वही ऐसा आदमी होता है जिसके पास अंकनीय मूल्यवान अनुभूतियाँ होने की सबसे अधिक संभावना होती है। कलाकार वह बिन्दु है जहाँ मन का विकास सुव्यक्त हो उठता है। उसकी अनुभूतियों में कम-से-कम उन अनुभूतियों में जो उसकी कृति को मूल्यवान बनाती है— ऐसे आवेगों का सामंजस्य लक्षित होता है जो अधिकांश लोगों के मन में अस्त-व्यस्त परस्पर, अन्तर्भूत तथा द्वन्द्वरत के रुप में हुआ करते हैं— कुछ तो अधिकांश लोगों के मन में अव्यवस्थित रूप में विद्यमान होते हैं और उनकी कृति उसी को व्यवस्था देती है।

रिचर्ड्स कविता को एक मानवीय व्यवहार मानता है जो व्यक्तियों को प्रभावित करने का कार्य करती है। इसलिए जो कोई उसका मनुष्यों के सम्बन्ध में मूल्यांकन करता है, वही उचित मूल्यांकन करने में समर्थ भी होता है। कला की अनुभूति असाधारण अनुभूति नहीं होती वरन् किसी कविता को पढ़कर या किसी चित्र को देखकर हमारे अन्दर जीवविज्ञान सम्बन्धी (बायोलॉजिकल) परिवर्तन होते हैं, लोकोत्तर आनन्द प्राप्त नहीं होता। अतः आवेगों के सामंजस्य और संतुलन की स्थिति ही सौन्दर्यानुभूति है जो मूल्यों के अनुसार श्रेष्ठ या हीन होती है।

उनकी दृष्टि में आलोचना दो बातों पर टिकी होती है— एक मूल्य, दूसरा उसकी सम्प्रेषण-क्षमता। कला मूल्यों के साथ रहती है क्योंकि वे महान पुरुषों के जीवन के क्षणों से उद्भूत होती है और उन्हें स्थायी बनाने का कार्य करती है, उन क्षणों को जब उनका अनुभव, पर अधिकार और प्रभाव सर्वोच्च है— उन क्षणों की जब अस्तित्व को बदलती हुई संभावनाएँ स्पष्ट दिखायी

देती हैं और एक स्थिति के बाद उसमें सुंदर समन्वय हो जाता है जो एक उत्कृष्ट रचना को जन्म देती है। वस्तुतः कलाएँ हमें यह निर्णय के करने के लिए उत्तम आँकड़े प्रस्तुत करती हैं कि हमारे कौन से अनुभव अन्य अनुभवों से अधिक मूल्यवान हैं।

इसके साथ ही, प्रश्न यह उठाया गया कि, यदि सफल कविताओं में मनोवेगों का संतुलन निष्फल होता तो एक सफल कविताएँ समान रूप से श्रेष्ठ हैं या उन सब में मनोवेगों के संतुलन की स्थिति समान होती है? इसके उत्तर में कहा गया कि मनोवेगों के संतुलन की अवस्था में अन्तर होता है। रिचर्ड्स मनोवेगों के संतुलन के दो रूप मानता है। मनोवेगों के समाहार द्वारा, जहाँ अनेक मनोवेगों का समाहार या समावेश होता है। दूसरा— मनोवेगों के बहिष्कार द्वारा, जहाँ कुछ सीमित मनोवेगों को स्वीकार किया जाता है तथा अधिकांश मनोवेगों का बहिष्कार किया जाता है। वह मनोवेगों के संतुलन को एक जटिल प्रक्रिया मानता हुआ कहता है कि इसकी सूक्ष्म एवं जटिल क्रिया के सभी पक्षों को पूरी तरह समझ पाना संभव नहीं है। उसके अनुसार इसका कारण यह है कि मनोविज्ञान एवं मनोविश्लेषण के विकास के बावजूद भी मन की विविध क्रियाओं को वृत्तियों एवं मनोवेगों के उदय, संघर्ष और समन्विति की पूर्ण वैज्ञानिक एवं वस्तुपरक व्याख्या संभव नहीं है क्योंकि इसकी सीमा सीमित एवं स्पष्ट है।

रिचर्ड्स की दृष्टि में मन की स्थितियाँ सर्वाधिक मूल्यवान होती है, जिनमें मानवीय क्रियाओं की सर्वाधिक और सर्वोत्कृष्ट संगति स्थापित होती है तथा माँगों के अनुसार उसमें कम-अधिक तथा रुचि-अरुचि की स्थिति आती है। व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन में जीवन का संभव मूल्य किस प्रकार उपलब्ध किया जा सकता है, यह माँगों की संगतिपूर्ण व्यवस्था पर निर्भर है। बिना ऐसी व्यवस्था के मूल्य समाप्त हो जाते हैं क्योंकि अव्यवस्था की दशा में महत्त्वपूर्ण और तुच्छ दोनों प्रकार की माँगें असंतुष्ट रह जाती है।

यही स्थिति साहित्यिक मूल्य की भी होती है। भाव उत्पन्न करना ही साहित्य का मूल्य नहीं है। भाव मुख्य रूप से मन की प्रवृत्तियों के लक्षण मात्र होते हैं और इसलिए उनका कला में महत्त्व है। अनुभव के द्वारा जो प्रवृत्तियाँ उत्पन्न की जाती है, उन्हीं का वास्तविक महत्त्व है। इन प्रवृत्तियों की संघटना और रूप पर उस अनुभव (मानसिक-क्रिया) का मूल्य निर्भर होता है। अनुभव के समय हममें जिस उत्कृष्टता एवं चेतना का बोध होता है, उसका मूल्य नहीं है वरन् उसका मूल्य उसके उपरान्त होने वाली किसी एक या अन्य प्रकार की तत्परता पर निर्भर होता है अर्थात् किसी भी संवेदना का मूल्य उसके परवर्ती प्रभाव से आँका जाना चाहिए क्योंकि उसके द्वारा मन के गठन में स्थायी परिवर्तन होता है और साहित्य उन सभी साधनों में सर्वाधिक सशक्त साधन होता है, जिनके द्वारा मानवीय अनुभूतियों के क्षेत्र को व्यापक बनाया जा सकता है।

अतः रिचर्ड्स मनोविज्ञान को आधार बनाकर मूल्य सिद्धान्त की स्थापना करता है। उसकी दृष्टि में मूल्य का जो महत्त्व मानवीय क्रियाओं के अन्य क्षेत्रों में उपयुक्त है, वही साहित्य के क्षेत्र में भी उपयुक्त है। अतः वह सामान्य मानदण्ड है अर्थात् साहित्य के मूल्य का कोई विशिष्ट मानदण्ड नहीं होता है। साहित्य रचना एक मानवीय क्रिया है। अतः उसके मूल्य के मान वही सारी सामाजिक आवश्यकताएं हैं जो समाज में सभी मनुष्य के लिए काम्य हैं।

रिचर्ड्स का सम्प्रेषण सिद्धान्त

आई०ए० रिचर्ड्स का दूसरा महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त सम्प्रेषण सिद्धान्त (Theory of Communication) है। रिचर्ड्स ने मानव के सामान्य व्यवहार कि वह एक सामाजिक प्राणी है और बाल्यावस्था से ही वह अपने भावों एवं विचारों का सम्प्रेषण करता रहा है, को आधार बनाकर अपने सम्प्रेषण सिद्धान्त की प्रतिष्ठा की है। इसी सम्प्रेषण शक्ति के कारण ही मनुष्य का आज इतना विकास संभव हुआ। सम्प्रेषण मानव के अभिव्यक्ति की सबसे प्राचीन प्रणाली है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से किसी जीव की उत्तेजना की निश्चित प्रतिक्रिया सम्प्रेषण है। यह अपने आप में केवल प्रतिक्रिया नहीं अपितु उत्तेजना का संचरण तथा प्रतिक्रियाओं की जागृति से सम्बन्ध स्थापित करना है। सामाजिक दृष्टिकोण से दो या अधिक मनुष्यों के बीच निश्चित चिह्नों तथा प्रतीकों द्वारा विचार या संवेदना का आदान प्रदान ही सम्प्रेषण है।

रिचर्ड्स के अनुसार सम्प्रेषण का अर्थ न तो अनुभूति का यथावत् प्रत्यंकन है और न दो व्यक्तियों के बीच अनुभूति का तादात्म्य, बल्कि कुछ अवस्थाओं में विभिन्न मनोगत अनुभूतियों की अत्यन्त समानता ही सम्प्रेषण है। सम्प्रेषण तब होता है, जब वातावरण पर किसी मन की ऐसी क्रिया होती है कि दूसरा मन उससे प्रभावित हो उठता है और दूसरे मन की अनुभूति पहले मन की अनुभूति के समान होती है, साथ ही, उस अनुभूति से अंशतः प्रेषित भी। दोनों अनुभूतियाँ थोड़ा या अधिक समान हो सकती है तथा दूसरी अनुभूति पहले पर आश्रित हो सकती है। (प्रिंसिपल ऑफ लिट्रेरी क्रिटिसिज्म, पृ० 177) कलाकार का सम्प्रेषण के प्रति गहरा असंतोष रहता है। कलाकार के माध्यम, समय के साथ रूढ़ होते चलते हैं और वह उन्हें छोड़ता चलता है साथ ही, सम्प्रेषण के नये-नये रूपों को पकड़ने का प्रयास करता है। सम्प्रेषण के प्रत्येक साधन अपने परिवेश एवं परिस्थिति के अनुकूल होते हैं लेकिन इस संदर्भ में कलाकार का सामर्थ्य बहुत महत्त्वपूर्ण होता है।

आई०ए० रिचर्ड्स का मानना है कि सम्प्रेषण एक अचेतन प्रक्रिया है। कलाकार या कवि सम्प्रेषण के प्रति सजग नहीं रह सकता। कलाकार की अनुभूति एवं कलाकृति में जितना अधिक संवाद होगा, उसी के अनुपात में उसकी सम्प्रेषण क्षमता भी होगी। वह कहता है कि अनुभूति की समानता की मात्रा का निर्धारण अनेक कारणों से होता है। जैसे— सम्प्रेषक (कलाकार) की अभिव्यंजक क्षमता, ग्रहीता की योग्यता, सहृदयता, सुरुचि, अवधान आदि। वही ऐस्थेटिक अनुभव ठीक है जो सम्प्रेषण में सफल होता है। अतः ऐस्थेटिक अनुभव भी प्रेषित होना चाहिए, वह मन की आन्तरिक क्रिया मात्र न रह जाय। यदि सम्प्रेषण के लिए कलाकार सतर्क होकर अलग से कोई चेष्टा नहीं करता तो कलाकृतियों में विलक्षणता नहीं आती। कलाकृति को ठीक बनाने की प्रक्रिया का अपरिमित सम्प्रेषणात्मक महत्त्व है। दूसरी बात यह कि जितनी दूर तक कोई कलाकृति कलाकार की अनुभूति से मेल खाती है, उतनी दूर तक वह दूसरों में तत्समान अनुभूति जगा पाती है।

रिचर्ड्स का कथन है कि कलाएँ मनुष्य की सम्प्रेषण क्रिया का उत्कृष्ट रूप होती है। मनुष्य सामाजिक प्राणी है और वह प्रारम्भ से ही सम्प्रेषण क्रिया में अभ्यस्त है। सम्प्रेषण के पूर्व हमारे मन में भाव या अनुभव उत्पन्न होते हैं, किन्तु उनका स्वरूप इस बात पर निर्भर करता है कि हमें उन्हें अन्यों तक पहुँचाना है। मनुष्य की प्रगति के साथ सम्प्रेषण के रूपों में अनेक रूप जुड़े हैं

लेकिन कलाएँ उनमें सर्वाधिक प्रभावी हैं। कलाकार सम्प्रेषण के लिए ही रचना में प्रवृत्त होता है। उसका मानना है कि यह मेरी दृष्टि में सर्वाधिक उचित है लेकिन यह मानना सत्य नहीं है कि कलाकार सामान्यतया अपने को ऐसा मानता है। जिस समय वह रचना में लगा होता है उस समय वह सम्प्रेषण के सजग और सायास प्रयत्न में प्रवृत्त नहीं रहता। यदि उस समय उसे कोई पूछे तो कदाचित् वह उसे उत्तर देगा कि उसके लिए सम्प्रेषण का विचार असम्बद्ध या अत्यन्त गौण है, वह जो कुछ निर्मित कर रहा है, वह स्वयं सुन्दर है, उसके द्वारा उसे वैयक्तिक संतुष्टि मिलती है कि अन्य लोग उसकी कृति को पढ़ेंगे और उससे अनुभूति प्राप्त करेंगे, यह बात उसे आकस्मिक या गौण लगती है। वह यह भी कह सकता है कि मैं केवल मनोविनोद कर रहा हूँ।

उसका मानना है कि कलाकार चाहे जो माने या कहे, इससे कृति के समर्पण पक्ष का महत्त्व कम नहीं होता क्योंकि कलाकार के अचेतन मन में यह पक्ष निरन्तर बना रहता है। रचना के निर्माण के समय यदि कलाकार के सम्मुख सम्प्रेषण की भावना प्रभावी हुई तो वह निम्न कोटि का कलाकार भी सिद्ध हो सकता है। सम्प्रेषण की सजगता के साथ उत्कृष्ट कृति का निर्माण यद्यपि असंभव नहीं फिर भी कठिन अवश्य है। सामान्यतः जब कलाकार सर्जन क्रिया में प्रवृत्त होता है उस समय उसका ध्यान रचना विषयक अन्य तत्त्वों में रहता है, जो लय, शब्दावली तथा विम्ब सृजन है फिर भी, कलाकार के अवचेतन मन में यह भाव पड़ा रहता है।

रिचर्ड्स की दृष्टि में यह एक कठिन स्थिति है क्योंकि भावों एवं विचारों का सम्प्रेषण ठोस वस्तु के सम्प्रेषण से भिन्न होता है। कलागत सम्प्रेषण वहीं पर संभव होता है जब एक कलाकार अपने आसपास की परिस्थिति पर ऐसा प्रभाव डालता है कि उसके सम्पर्क में आने वाले दूसरे लोग उससे प्रभावित हो उठते हैं और उन सबको वही अनुभव होता है जो कलाकार ने अनुभव किया था। रिचर्ड्स ने सम्प्रेषण के साधनों की चर्चा करते हुए परिस्थिति, कल्पना, आवेगों की व्यवस्थिति संघटना, विम्ब निर्माण तथा लय को महत्त्वपूर्ण माना है।